राजनीति में अयोध्या की राजवंश परम्परा, राज्याधिकार के नियम, धनुषभंग की अपेक्षा, जनकपुरी अयोध्या तथा लंका की राज्य व्यवस्थाएँ, लंका की राज्य व्यवस्था मे सचिव पार्षद प्रतिनिधि आदि अधिकारियों के दायित्व, सुग्रीव का वानर राज्य और उसकी सैन्य व्यवस्था, आक्रमण के प्रकार

अयोध्या की राजवंश परम्परा में हमे यह ज्ञात होता है कि अयोध्या मे सदैव ज्येष्ठ पुत्र को ही राज्य का उत्तराधिकारी बनाया जाता है । तुलसी दास जीने प्रताप भानु की कथा मे इसे स्पष्ट कर दिया है[60] वे सिंहासन पर आरूढ़ हुए व उनके भाइ ने उनकी बातों का अनुसरण किया है ।[61] गोस्वामी तुलसी दासजीने सदैव राजतंत्र प्रमाली मे अपनी अखन्ड आस्था को प्रकट किया है । इसीलिए राजा को भी अपनी प्रजा से अपने नवीन राजा के चुनाव के लिए राय लेना आवश्यक माना है । मध्यकाल चूकि अराजकता से भरा हुआ था वहाँ पर राजा को अपनी राजवंश परम्परा का कुछ भी ध्यान नही था । राजा स्वयं अपने पिता या भाई की हत्या करके स्वयं राजा बन बैठते थे । ऐसे में परम्परा का सवाल ही कहां उठता है । यहां पर इस सन्दर्भ में परम्परा शब्द को समझना भी आवश्यक प्रतीत होता है । परम्परा यदि गतिशील है तो उसमे युगानुकुल संस्कार मिलते जाते हैं । परम्परा यदि उचित है तो वह संशोधन चुनाव एवं त्याग सभी को अपने समक्ष आने देती है वह कसोटी पर खरी उतरती है । परम्पराओं का पालन करने मे मे ही संस्कृति का निर्वाह होता है ।

अयोध्या मे हमेशा से जेष्ठ पुत्र राज्य देने की परम्परा रही है परन्तु यह तब ही हो सकता है जबकि राजा उसे राज्य दे-

वेदविदित संमत सबही का
जेहि पितुदेई ओपावईटीका

यही भरत से भी कहा जाता है -

लोक बेद संमत सब कहई
जेहि पितुदेइ राजु सोलहई

मुनि वशिष्ठ के अनुसार दशरथ नीति विधान होने के कारण अपने वचनों के विपरीत जाना धर्म व नीति दोनों का विरोध करना था। दशरथ ने जेष्ठ पुत्र को राज्य न देकर अपनी प्रिय पत्नी के पुत्र को राज्य दिया था वे हृदय से जेष्ट को ही देना चाहते थे परन्तु वे ऐसा नही कर सके । राज्याधिकार के सम्बन्ध मे भी यही कहा जा सकता है कि जेष्ट पुत्र को ही राज्य प्राप्त करने का अधिकार होता है जिसे तुलसी ने प्रतापभानु के माध्यम से स्पष्ट किया है यदि जेष्ट पुत्र अयोग्य हो तो राजा दूसरे व योग्य पुत्र को राजा बना सकता है । वैसे राम ने अपने युवराज बनाने पर विरोध ही किया था क्योंकि वे यह समझते थे कि उन सभी का इस पर एक समान अधिकार है । और इसी को उन्होंने रामराज्य मे रामपंचायत के रूप में कर के भी दिखा दिया ।[62] राम पंचायत के राज्यमंच पर केवल राम व सीता ही नही बैठते है बल्कि उनके भाई भरत और लक्ष्मण शत्रुघ्न व हनुमान भी बैठते है । और उसी राम पंचायत से पंचायत राज्य की शुरूआत हुई । राम अपनी माँ से कहते हैं पिता ने मुझे वन का राज दिया है और सचमुच वे चित्रकूट मे शान्तीपूर्वक जीवन व्यापन करते हैं ।[63]

धनुष भंग की अपेक्षा -

तुलसी दासजी ने विश्वामित्र के साथ राम व लक्ष्मण को पहले भेजा है ताकि उनके पराक्रम का परिचय प्राप्त हो जाये वे सारे राक्षसों को नष्ट करने के बाद जनकपुरी आते हैं वे मारीच सुबाह ताड़ का सभी से युद्ध करने के बाद ही धनुषभंग के लिए जाते हैं ।[64]

एक प्रकार से यह धनुषभंग उस समय के राजाओं में सर्व शक्ति सम्पन्न कौन है इसको स्पष्ट करने का ही प्रयास है ।

जब रावण व बाणासुर ही उस धनुष को नही हिला सके ऐसे मं एक छोटे राजकुमार के द्वारा धनुष का भंग करवाना तुलसी के इस आशय को प्रकट करती है कि वे शक्तिशाली होने साथ-साथ विष्णु का अवतार भी है क्योंकि वहां राम रमाकर का धनुष लेकर परशुराम का आना भी इसी अवतार की पुष्टि करती है । साथ ही साथ सारे दुष्ट राजाओं के हृदय में भय का संचार भी करता है। यह स्पष्ट था कि धनुष करनेवाले के साथ ही सीता का विवाह होगा राम ने सीता को अपने पौरूष के सहारे पाया है । अतः यह अपेक्षा जनक को भी कि जो भी इस धनुष को भंग करेगा वह पौरूष एवं शक्ति से ही सारे संसार पर विजय प्राप्त करने मे समर्थ होगा ।[65]

जनकपुरी अयोध्या तथा लंका की राज्य व्यवस्थाएँ -

जनकपुरी महाराजा जनक की राजधानी थी । दोनो ही वैभव शालिनी थी । जनकपुर अति सुन्र नगर के रूप में विख्यात था । जहां पर सचिव सेनापति और योद्धाओं के सुन्दर घ रथे पूरे राज्य में शान्ति व खुशहाली रहती थी । तुलसीदास जीने राम विवाह व धनुष भंग के अवसर पर जनकपुरी को सजाने संवारने का वर्णन किया है । जनकपुरी चारो भोर परकोटो से घिरी नगरी थी । जिन्हें उपयुक्त अवसरों पर सजाया सवारा जाता था । सभी पुर वासी अपने नित्यदैनिक कार्यों को सुचारने रूप से करते थे । वर्णाश्रम की व्यवस्था का पालन पूरी तरह से किया जाता था । ऋषिगणों ब्राह्मणों गौ सभी का यथोचित ध्यान रखा जाता था । सारे राज्य संचालन के कार्यों में राजा स्वयं रूचि लेते थे । वे प्रजा को पुत्रवत रखते थे । प्रजा भी उनको पितृवत स्नेह करती थी । राजा रोज वेदों का व धार्मिक ग्रंथो का पाठ सुनता व करता था ।

पुर रम्यता राम जब देखी हरषे अनुज समेत विशेषी
पुर बाहिर पर सरिता समीता उतरे जह जह विपुल महीपा

जनकपुरी अति रम्य थी । लक्ष्मण सहित राम नगर के सौन्दर्य को देखकर अति प्रसन्न हुए । उस नगरी की राज्य व्यवस्था इतनी अधिक सुदृढ़ थी कि शत्रु उसकी ओर नजर उठा कर भी नही देख सकता था । वहां का जीवन एकदम सहज दिखाई देता है राजा चूंकि धर्म परायण है व सारे प्रबन्ध मे चतुर मंत्रियों की नजर रहती है । वर्षा समय पर होती है । पाललें उत्त महोती है समुद्र अपने रतन किनारों पर लाकर डाल देते हैं । शत्रु को कभी छोड़ा नहीं जाता है । सेना सदैव तत्पर रहती है परन्तु राजा को शत्रुओं से युद्ध करने की आवश्यकता नही पड़ती है । जिस स्थान पर स्वयं लक्ष्मी स्त्री वेश मे रहती हो वहां के राज्य प्रबन्ध मे कैसे कमी रह सकती है । वहां के सभी कार्य सुचारू रूप से होते हैं । पिछले अध्यायों में हम जनकपुर की शोभा का विस्तृत वर्णन राम विवाह के समय मे कर चुके है । तुलसी ने इस प्रकार जनकपुरी की शोभा का वर्णन किया है ।[66]

अयोध्या -

अयोध्या का वर्णन तुलसी ने पर्याप्त किया है । दशरथ जी चूंकि चक्रवर्ती राजा थे वह स्वाभाविक ही था कि उनकी नगरी पूरी तरह से शत्रुओं से रक्षित हो । वहां प्रजा की प्रत्येक सुख सुविधा को ध्यान मे रखा जाय । इसका राजा का आदेश होता था । इसे स्वयं महाराज मनु ने बनवाया और बसाया था । उसके चारों ओर गहरी खाइयाँ खुदी हुई थी जिसमें प्रवेश करना या जिसे लांघना अत्यन्त कठिन था । वह नगरी दूसरों के लिए अति दुर्गम व दुर्जय थी । घोड़े हाथी गाय बैल ऊँट तथा गदहे आदि उपयोगी पशुओं से वह फरी भरी पुरी थी । कर देने वाले सामन्त नरेशों के समुदाय उसे सदा घेरे रहते थे । विभिन्न देशों के निवासी वैश्य उस पुरी की शोभा बढाते थे । वहां के महलों का निर्माण नाना प्रकार के रत्नों से हुआ था । वह नगरी भूमण्डल की सर्वोत्तम दुन्दुभि मृदङ्ग वीणा आदि वाद्यों की मधुर ध्वनि से अत्यन्त गूँजती रहती थी ।[67] स्तुतिपाठ करने वाले मागध वहां भरे हुए थे । इस प्रकार वह राम की नगरी के चारों ओर एक परकोट से घिरी हुई थी उसकी बहीर जाए स्वर्ण के पानी

चढाई हुई थी । सायंकाल को प्रासादों की स्फटिक भितियों मे दीपों को प्रज्वलित किया जाता था । नगर के आबाल वृद्ध सम्पन्न एवं सुखी थे । निर्धनता ढुंढे नही मिलती थी, सभी लोग अपने धर्मों में तत्पर रहते थे, प्रकृति स्वयं प्रसन्न रहती थी, गौ ब्राह्मणों को आदर दिया जाता था । पर्वतों से रत्न अपने आप उपर आ जाते थे ।[68] सागर तट पर अपने रत्नों को छोड़ देता था । पृथ्वी सब ओर से हरी दिखाई देती थी । न कोई अज्ञानी था न कोई अभागा था । रोगों का नामो निशान नहीं था । अकाल मृत्यु नही होती थी धर्म के चारों स्तम्भों की स्थापना वहां हो चुकी थी तपस्या ज्ञान दया व दान सभी अपने पडोसी से प्रेम करते थे । राजा का पितातुल्य सम्मान था । आपसी द्वेष व द्रोह नही था सभी लोक सुखी थे । सेना सदैव सुसज्जित रहती थी । चतुर मंत्री परिषद थी गुरूओं व कुल गुरूओं की सलाह से सारे कार्य होते थे, गुप्तचर सेना थी, पहरेदार तैनात थे । लंका की राज्य व्यवस्था का अध्ययन करने पर यह ज्ञात होगा कि कुबेर द्वारा निर्मित यह नगरी भी सुन्दर से बनाई गई थी । चारों तरफ सागर के होने से सुरक्षित थी इसके चारों ओर अजेय दुर्गो की स्थापना की गई थी, अनेकों पहरेदार घूम-घूम कर परकोटे की जो सोने काथा की निगरानी करते थे ।[69] रानियों के खास महलों की व्यवस्था लंका मे भी थी राजमहल के उपर सोने की दीवारे थी । उसके बाहरी पाटक भी सोने के बने हुए थे । उस लंका मे भयानक राक्षस भरे हुए थे जो कि एक से एक महान योद्धा थे । परकोटे के चारों ओर बड़े-बड़े दान्तवाले राक्षस पहरा दे रहे थे । उसके भवन पर्वतों के समान ऊंचे-ऊंचे थे और अनेको प्रकार को लगाये गए थे । सुन्दर स्थितियां वहां विचरण कर रही थी । उस तक पहुँचने के लिए सो योजन का समुद्र लांघना पड़ता था । लंका में सचिव पार्शद व मंत्रियों के अनेकों घर थे। राक्षस राज की राजधानी जिस पर्वत पर स्थित थी उसे त्रिकूट कहा जाता है वहां वृक्षों भोरों गुंजन करते थे व करोड़ो भयंकर योद्धा नगर के आगे पहरा देते थे उन्हें नर दुर्ग के रनक में सरखाया गया है । लंका अत्यन्त सुन्दर नगरी थी वह उस काल की सबसे समृद्ध नगरी

मानी जाती थी । लंका की राज्य व्यवस्था मे सचिव पार्षद प्रतिनिधि आदि अइधकारियों के दायित्व लंका रावण की राजधानी थी । वहां प रकहने को सारी सभा भरी रहती थी वहां ससचिव भी थे, पार्षद भी थे, जनता के प्रतिनिधि भी थे, सभी अधिकारियों को अपने-अपने दायित्वों का ज्ञान था । यह नही कहा जा सकता कि वे ज्ञानी नही थे रावण खुद ज्ञानी व पंडित था । अतः यह तो आवश्यक ही था कि उसकी सभा के सभी अधिकारी विद्वान हो परन्तु वहां उन सभी की उपस्थिति का कोई अर्थ नही था विभिषण ने यह स्पष्ट कहा है कि यदि ये -

सचिव वेद गुरूतीन जो प्रिय बोलहि भय आस
राजधर्म तन तीति कर होई बगिही तास[70]

वे सभी रावण के डर के मारे हा मे हां मिलाते हैं तो राज्य की व्यवस्था ठीक नही रह सकती थी । वहां पर उन सभी का धर्म अधर्म का प्रतिपादन करना धर्म का नाश करना गौ ब्राह्मणों का ना-ना करना अनेकों स्त्रियों का उपहरण करना व उन्हे बन्धी बनाकर रखना देवताओं से कमाम करवाना उनके दायित्व को माल्यवंत की बात भी नही सुनी जाती थी । सुग्रीव का वानर राज्य और उसकी सैन्य व्यवस्था सुग्रीव का वानर राज्य पम्पा सरोवर के आस पास फैला हुआ था उसी मे तरह-तरह के फलों के झाड़ थे उस किष्किन्धा पुरी की शोभा देखते ही बनती थी सभी ऋतुफल वहां मौजूद थे । जब लक्ष्मण वहां पहुंचते है तो उन्हे उस गुफा में से जाना पड़ता है जिसे किष्किन्धा कहते हैं । उसके द्वार पर बड़े महाबली वानर रहते हैं वह बहुत ही रमणीय गुफा के रूप में बसी हुई थी वह रत्नों से भरी हुई पुरी थी[71] वहां के वन उपवन फूलों से सुशोभित दिखाई दे रहे हैं । वहां श्रीमंतों के बड़े बड़े भवन दिखाई देते थे व देव मंदिर एवं राजभवन भी दिखाई देते थे निर्मल जल से भरी हुई पहाड़ी नदियाँ बह रही थी उस पुरी मे चौड़ी चौड़ी व लम्बी सड़कें थी । वहां पर जो वानर थे वे सभी अपनी इच्छानुसार सुन्दर रूप धारण कर सकते थे । सात खन्डों के बाद वहां अन्तःपुर था

जिसमें सुग्रीव रहता था । वहां अनेको रूप सुन्दरियाँ थी सुग्रीव के सेवकों से भवन भरा हुआ था । वनों में सभी प्रकार जीव जन्तु मूक्त रूप से घूम रहे हैं ।

MEHTA LIBRARY University of Baroda

सुग्रीव की वानर सेना –[72]

सुग्रीव की सेना में जाम्बवान्त नाम का एक वीर है उसे परास्तकरना कठिन है । उसी का एक भाई भी है उसका नाम धूम्र है केसरी पुत्र हनुमान जिसने पहले ही काफी राक्षसों व अक्षय कुमार का वध कर दिया था । सुषेण धर्म का पुत्र है दधिमुख नामक सौम्य वानर चन्दज्ञमा का बेटा है । सुमुरण, दुर्मुख और वेग दर्शी नामक ये वानर मृत्यु के पुत्र है और ये साक्षात मृत्यु के समान ही है। स्वयं सेनापति नील अग्नि का पुत्र है बृहस्पती का पुत्र व हबनुमान का पिता केसरी भी है, अंगद इन्द्र का नाती है । मैन्द और द्विविध अश्विन कुमारों के पुत्र हैक । गणवाक्ष गवय, शरभ, और गन्धज्मादन यमराज के पुत्र है ।

इस प्रकार देवताओं से उत्पन्न तेजस्वी शूरवीरों की संख्या दस करोड़ है सब युद्ध को आतुर है । इनके अलावा बचे वानरों का वर्णन करना असंभव जान पड़ता है क्योंकि गणना नही की जा सकती है ।

ऐसा रावण के गुप्त चर शार्दूल ने रावण को बताया था इनके अलावा राम लक्ष्मण है । और श्वेत और ज्योतिर्मुख ये दो भगवान सूर्य के ओरस पुत्र है हेमकूट-वरूण का पुत्र है नल विश्वकर्मा का पुत्र है दुर्धर वसु देवता का पुत्र है । विभिषण भी है सुग्रीव भी है । राम की सेना में अठारह पद्मतो केवल वानरों की सेना के थे । सेना पजि सुग्रीव ने चारों परकोटो पर आठो योद्धाओं को रखा था ।[73] द्विविद, मयन्द, नल, नील अंगद गद विकटारूप दधिमुख केसरी निषढ और जाम्बवन्त सभी बलव में सुग्रीव के समान होने से चारों द्वारों पर रहकर आक्रमण करनेवाले थे ।

आक्रमण में - वे अनेको शास्त्रों से युक्त होकर राक्षण सो की सेना पर आक्रमण करते थे । वे सभी आकाश में जा सकते थे बन मे भी राम के पास असंख्य सेना थी । वे सभी प्रकार से रावण की सेना पर आक्रमण करते थे कभी छिप कर कभी चोटे पहुंचा कर नोचते व काटते थे । यही नवी वे बान, विशिख, तीर सर नाराच, सायक आदि विभिन्न प्रकार के बाणों से आक्रमण करते थे । अग्निबाण भी उनके पास थे ।

एक एक सन भिरहिपचारहि, एकन्ह एक मर्दि माहि जाराहि
मारहि काटहि धरहि पछारूहि सीस तोरि सीसन्ह मन मारहिं
उदर बिदारहिं भुजा उपारहि, गहि पद अवनि पटी के भट डारहि
निसि पर झट भहि गाड़ हि भालु उपर डारि देहि बहु बालु

वे राक्षसों पर हमला करते थे शस्त्रों से व अस्त्रों से भी व उनके पीछे आकाश मे भी दोड़ते थे । विशाल सशक्त सेना का संचालन योग्य सेनापतियों के अधीन होता था । दक्ष सेनापति ही रणनीतिर्गत था कूट नीति का सहारा लेकर शत्रु को परास्त करने मे समर्थ होते थे । इसी लिए राम की सेना रावण के उपर आक्रमण करते समय चार भागों में विभक्त कर योग्य सेनापतियों के नेतृत्व में बन्दर प्रभु के प्रताप से पर्वत शिखर ले ले कर सब दौडते हैं वे ऊंची नीची घाटी नही देखते है पर्वतों को फोड़कर मार्ग बना लेते हैं वे कर कराते है और गरजते है । ओढो को दान्तों से काटते और भारी डपटते हैं ।[74] सुग्रीव की वानर सेना के सेनापति सभी प्रकार के युद्धों में निपूर्ण थे उनका बल अतुलनीय था वे रावण की सेना पर इस प्रकार टूट पड़ते थे जैसे हरिन के बच्चे पर सिंह झपटता है ।

राजनीति और धर्म - राजनीति तथा तत्कालीन धर्म का अर्थ है मर्याधा अर्थात समाज व्यवस्था । धर्म वह है जो व्यक्ति और समाज को धारण कर उसका पोषण करे एवं संवर्द्धन करे राम के रूप में तुलसी ने धर्म की परिपूर्णता की ही कल्पना की है और उसके अर्त जीवन और लोक संग्रही कार्य कलाप को मर्यादा मे बान्धा है । विरजि

और विवेक उनके लिए धर्म के प्राण है । राग अथवा ममत्व से उपर उठके ही हम ऋतंभरा बनते हैं । जहां मेरा तेरा तथा कर्तव्य का अभिमान है वहां धर्मशील होना असंभव है ।

भक्त हानि लाभ जीवन मरण यश अपयश विधि हाथ[75]

कहकर उच्च कोटि का व्यवस्थावादी बन जाता है । धार्मिक शक्ति राजनीतिक शक्ति के समान ही शक्तिशाली होती है । दोनों एक दूसरे के पूरक गिने जाते हैं । धार्मिक शक्ति के अनुकूल होने से राजनीतिक प्रतिकूलता कि ओर ले ही जाती है दोनों का अनुकूल होना बहुत है आवश्यक है यदि राजनीतिक परिस्थिति नुकूल हो तो धार्मिक परिस्थितियों के प्रतिकूल होने का सवाल ही नही उठता है । भारत वैदिक काल से सनातन धर्म के पथ पर चला आ रहा है । बीच मे इस पर प्रबल भी हुए हैं पर भारत वर्ष ने अपनी प्राचीन धार्मिकता नही खोई । गोस्वामी तुलसादीस जी राजनीति के चार आधारों में सर्वप्रथम आधार धर्म को मानते हैं । और इसे ही हमारी प्राचीन संस्कृति मे भी माना गया था । प्रत्येक कार्य धर्म से ही सुशासित रहता है और इसीलिए उस राजनीति को श्रेष्ठ माना जाता है जिसका आधार धर्म पर होता है । प्राचीन भारत का राजा भी धर्म से बन्धा होता था । तुलसी दास जी के मानस मे राजा दशरथ चक्रवर्ती राजा के रूप में वर्णित है परन्तु उन्होने धर्म की रक्षा के लिए अपने प्राण त्याग दिये थे । धर्म से हर चीज बन्धी हुई होती थी । राजा का व्यक्तिगत जीवन भी धर्म से बन्धा हुआ होता था राजा ही क्यों प्रजा का जीवन भी धर्म से बन्धा हुआ होता था ।[76] और राजा व प्रजा दोनों को ही धर्म के अनुसार चलना आवश्यक होता था । धर्मविहीन जीवन पशुतुल्य माना गया है । हिन्दु विचारकों के अनुसार विधि के शासन के रूप में धर्म राज्य का सच्चा प्रभु है यह राधाकुन्मुद मुकर्जी का कथन है धर्म का तात्पर्य है । मर्यादा बनाए रखना, बोषक करना, संपादन करना, धर्म पांच प्रकार का होता है -

(1) वर्णधर्म (2) आश्रम धर्म (3) वर्णाश्रम धर्म[77] (4) नैमत्तिक धर्म

एवं (5) गुणधर्म । जैसे मधुमखियाँ सदा छत्ते में मधु संचित करती है वैसे ही ब्राह्मण लोग राजा को धर्मात्मा जितेन्द्रीय और जित क्रोध जानकर शास्त्र वचन से सैचन करते हैं धर्म के दस लक्षण है उनको हर राजा मे होना आवश्यक है - (1) धनि (2) क्षमा (3) शील (4) दम (5) अस्तेय (6) पवित्रता (7) इन्द्रिय निग्रह (8) ज्ञान (9) विद्या सत्य क्रोध का त्याग आदि ।

राज्य में चारों वर्णों के धर्म की रक्षा करना राजा का कार्य है क्यंकि अधर्म का अनुसरण करने से प्रजा को बचाना राजा का सनातन धर्म है । यदि कोई मनुष्य अपने धर्ममार्ग से विचलित हो तो उसे बाहुबल से दण्ड देना राजा का कर्तव्य है क्योंकि इसीसे शाश्वत धर्म की रक्षा होती है । इस प्रकार राजनीति बिना धर्म व धर्म बिना राजनीति की कल्पना करना असंभव है ।

राजनीति तथा परिवर्तित संस्कृति -

किसी भी देश की राजनीति से वहां की संस्कृति का आभास हो जाता है जब कहीं पर शान्तीपूर्ण वातावरण रहता है तो वहां पर सांस्कृतिक उन्नति होती है और जब भी राजनीतिक असमान्य परिस्थितियां होती है तो संस्कृति का भी ह्रास होने लगता है । तुलसी मध्यकाल की उपज है जिन्होंने अपने बचपन से लेकर मृत्यु होने तक यथार्थ ही भोगा था । उस काल मे मुगलों का राज था और वे भारतीय संस्कृति को नष्ट करना चाहते थे ।[78] यदि राजनीतिक परिस्थितियां ही धर्म के विरूद्ध जाती हो तो संस्कृति को बचा पाना कितना कठिन होगा । जब चारों ओर आतंक का वातावरण होगा तो जनता कैसे अपनी प्राचीन सांस्कृतिक धरोहर की रक्षा कर सकती है । तुलसी साहित्य के अध्ययन करने से यह ज्ञात होता है कि उसमें 400 वर्ष के इस्लाम धर्म और संस्कृति के संघात और समन्वय के फल स्वरूप एक नये सांस्कृतिक पुष्टि का विकास मिलता है । इस्लामी संस्कृति मूलतः भक्तिवादी संस्कृति है और और भी उसमें कुछ ऐसे मानदण्ड थे जो हिन्दु संस्कृति के हिसाब से बुरा माना जाता है । तुलसी

के काल में राजनीति मे बदलाव आ रहा था और उसका सीधा प्रभाव संस्कृति के स्वरूप को विकृत कर रहा था । इसी लिए दिन प्रतिदिन प्राचीन भारतीय संस्कृति को पुनः स्थापि तकरना बहुत आवश्यक हो गया था । उस मध्यकालीन इतिहास समाज संस्कृति का अध्ययन करते हुए ही हम यह ज्ञात कर सकते हैं कि संस्कृति मे कितना परिवर्तन आया है प्राचीन संस्कृति व वर्तमान संस्कृति में कितना अन्तर है ।[79] वैसे भी भारत पर समय समय पर अनेकं विजातीय जातियों ने आक्रमण किये हैं । जिनका प्रभाव न जाहते हुए भी भारतीय जन मानस पर उसकी संस्कृति पर पड़ा उसमें परिवर्तन आये और इन परिवर्तनों से ही नवीन संस्कृति का जन्म हुआ तुलसी ने इसी विकृत संस्कृति को उसके प्राचीन मूल स्वरूप में रूपान्तरित करने का प्रयास अपने राम चरित मानस से किया है ।

राजनीति तथा तत्कालीन समाज -

किसी राज्य की जनता पर सबसे ज्यादा प्रभाव उसकी राजनैतिक स्थिति का पड़ता है क्योंकि यदि अनुकूल राजनीतिक परिस्थिति होगी तो समाज मे सुख समृद्धि होगी व संस्कृति की उन्नति होगी यदि विपरीत परिस्थिति हुई त समाज छिन्न भिन्न हो जायेगा आराजकता फैल जायेगी।[80] इसलिए यह सर्वप्रथम आवश्यक है कि देश राज्य की राजनीतिक परिस्थितियों का अधिक से अधिक सुधारने का प्रयास किया जाय । राजनीति का प्रभाव केवल राज महलों मे ही नही पड़ता है उसका प्रभाव तो चारों ओर के वातावरण पर पड़ता है उस काल में भारतीय जन मानस पर अत्याचार हो रहे थे । उस समय उनकी सहायता करनेवाला कोई नही था । गरीब वर्ग बुरी तरह से पिस रहे थे उनकी जीवनशैली बदल गई थी । वे आतंक के माहौल मे जीवन व्यापन कर रहे थे । राजाओं को अपने राग रंग से फुर्सद ही कहां थी कि वे समाज में फैली हुई विकृतियों को सुधारने का कार्य करें ऐसे में सारे प्रतिमान बदल गये थे । सारे नियमों को छोड़ दिया था धार्मिक मान्यताओं में भी परिवर्तन आ गया था । राज्य की नीति निर्धारण में शोषित वर्ग के लिए कुछ भी नही होता था । चारों ओर नैराश्य की भावना

ने घर कर लिया था । साधनामय जीवन की जगह समाज के सामने राजा या नवाबों का विलासपूर्ण जीवन था एवं उसके अंग परिवारों मे पुन वर्णाश्रम धर्म की प्रतिष्ठा करना आवश्यक हो गया था ।[81] भारतीय जनता को उस पर होनेवाले अत्याचारों से मुक्त करना भी आवश्यक था । इसीलिए तुलसी दास ने राम चरित मानस की रचना करते हुए उन्हे एक नवीन चेतना प्रदान की जिससे उनमें पुनः अपनी प्राचीन गौरवमयी संस्कृति को पुनः जागृत करने की आकांक्षा उत्पन्न हुई । उस काल में शासक मुसलमान थे और उनकी अपनी कुंवर भारतीय धर्म से हटकर मान्यताएँ भी थी उनका प्रभाव तात्कालीन समाज पर पड़ा उसमें परिवर्तन आने लगा ।[82] संयुक्त परिवार प्रणाली नष्ट होने लगी, समाज मे ऊँच-नीच की भावनाएँ पनपने लगी । लोगों की चारित्रिक दृढता में कमी आने लगी गरीब लोग भी अमीरं की नकल करने में अपना रहा सहा भी गवांने लगे । सामान्यजन को अपनी जीवन की निसारता दिखाइ देने लगी । धर्म का स्थान पाखण्ड ने ले लिया व नारी की महिमा को कलुषित कर दिया गया उसका वह रूप लुप्त हो गया और समाज में उसकी मान मर्यादा नष्ट होने लगी । यह सब उस काल की अस्थायी राजनीति के बुरे परिणाम थे । तुलसी ने अपने मानस में दो समाजों का चित्रण किया है रामकालीन समाज व तुलसी कालीन समाज । मानस में रामराज्य के समाज के माध्यम से तुलसी दास ने कुछ अच्छे पतिमान स्थापित करने का प्रयास किया है ।[83] दूसरे तुलसी कालीन समाज का चित्रण कलिकालीन समाज के रूप में किया है । रामकालीन समाज मे किसी भी प्रकार से दुःख की अनुभूति नहीं होता है व कलि काल में सुख को खोज पाना कठिन है । इस प्रकार तुलसी ने दोनों ही समाजों का वर्णन बारीक नजर से किया है ।

युद्ध की अनिवार्यता और विभिन्न युद्ध -

युद्धों के बारे में यह कहना उचित होगा कि उनके पीछे सदैव कोई न कोई कारण होता है । अकारण युद्ध नहीं होते हैं । तुलसी के समकालीन जो भी युद्ध होते थे वे राज्य विस्तार कि आकांशा

से किये जानेवाले युद्ध थे उनमें सदैव राज्य विस्तार के साथ साथ अपने अहं कि तुष्टी की भावना भी होती थी । उस काल में होनेवाले युद्धों में यह नही देखा जाता था कि उस युद्ध में गरीब जनता पर क्या प्रभाव पड़ेगा और नही वर्तमान समय में इसकी किसी को भी पर्वाह नही होती है हर प्रकार से शोषण तो गरीब सैनिकों का ही होता है । यहां इस बात का स्पष्टीकरण करना आवश्यक होगा कि कई बार युद्ध राज्य की विवशता हो जाते हैं जब सामनेवाला राजा बिना किसी कारण के अपने राज्य की सीमाएँ बढाने के लिए ही युद्ध करना चाहे तो उस दूसरे देश या राज्य को अपने राज्य की सुरक्षा के लिए युद्ध करना पड़ता था । मुगल केवल राज़्य विस्तार कर विश्व विजय के अभियान पर निकलने वाले युद्ध प्रेमी थे उन्हे सिर्फ अपनी राज्यों की हवस मिटाने के लिए युद्ध आवश्यक प्रतीत होते थे । राम के समय होनेवाले युद्ध हंमेशा नैतिक मूल्यों के साथ-साथ देश में अधर्म का नाश करने के लिए राक्षसों से अपने आप को बचाने के लिए किये जाने वाले युद्ध थे । रावण ने अपने राज्य विस्तार की लालसा से स्वर्ग तक पर अपना विस्तार कर लिया था । सारे देवता उसके यहां बंदी थे उसने पाताल पर भी अपना आधिपत्य जमा लिया था । उसके द्वारा किये जाने वाले युद्ध अनिवार्य नही कहे जा सकते थे । उनमें न तो नैतिक मूल्यों को स्थापित करने के ही प्रयास थे नही अपने स्वयं के राज्य की सुरक्षा पृथ्वी पर राक्षसों को ही देखना चाहता था इसीलिए वह युद्ध करता था ।

विभिन्न युद्ध - रामचरित मानस में युद्धों का सजीव चित्रण है उसमें कहीं ऐसा नहीं लगता है कि वे थोपे जा रहे हैं । जब भी कोई युद्ध होता है तुलसी पात्रों के अनुसार सफल चित्रण करते हैं। तुलसी चूंकि साहित्यकार थे उन्होंने पात्रों में आन्तरिक भावनाओं को सही प्रकार से चित्रित किया है । तुलसी दास जीने अनेकों युद्धों का वर्णन मानस मे किया है उनके द्वारा आरम्भ से अन्त तक युद्धों का सजीव चित्रण हुआ है । उन्होंने आरम्भ मे ही राम व लक्ष्मण को ले जाने के लिए आये हुए विश्वामित्र जी की चिन्ता के माध्यम

से इसे स्पष्ट करते हैं -

जँह जप जग्यजोग मुनि करहीं
अतिमारीच सुबाहुहि डरहीं
देखत जग्य निसाचर धावहि
करहि उपद्रव मुनि दुख पावहिं
गाधितनय मन चिन्ता व्यापी
हरि बिनु मरहिं न निसिचर पापी
तब मुनि बर मनकीन्ह बिचारा
प्रभु अवतरेउ हरन महि भारा[83]

यहां उन्होने इस में वर्णित होनेवाले सारे युद्धों की भूमिका एक साथ ही बना दी है ।

पुरूषसिंह दो उबीर, हरषि चले मुनि भय हरन
कृपा सिधु मति धीर अखिल विस्व कारन करन[84]

इस प्रकार राम लक्ष्मण -

कटि पटपीस कसे बर भाथा
रूचिर चाप सायक दुहु हाथा

दोनो भाई राक्षसों के नाश के लिए तत्पर थे -

चले जात मुनि दीन्हि दिखाई
सुनिताड़का क्रोध करि धाई
एकहि बान प्रान हरलीन्हा
दीन जानि तेहि निजपद दीन्हा[85]
तबरिषि निज नाथहि जियँ चीन्ही
विद्यानिधि कहुँ विद्या दीन्ही
जाते लाग न छुधा पिपासा
अतुलित बलतन तेज प्रकासा
आयुध सर्व समर्पिकै

प्रभु निज आश्रम आनि[86]

मारीच - सुबाहु

सुनिमारीच निसाचर क्रोही मारीच के
आते ही बिनु फरबान राम तेहि मारा
सत जोजन गा सागर पारा[87]

यहां पर राम ने उसे मारा नहीं है क्योंकि यही मारीच सीता हरण का कारण बनता है । वही स्वर्ण मृग बनेगा -

पावक सर सुबाहु पुनि मारा
अनुज निसाचर कटकु संघारा[88]

विरिध वध -

मिला असुर बिराध मगजाता आवतही
रघुबीर निपाता[89]

खरदूषन -

जातुधान सेना सुनि सेन बताई[90]
धाए निसिचर निकर बरूथा[91]

उस राक्षसों की सेना की देख सीता को गुफा में भेज करके बेद नाराच बाण छोडते हैं -

छाड़े विपुन नाराच लगे करन विकटपिसाच[92]

इस प्रकार उन्होंने खरदूषण से भी युद्ध किया -

मारीच को भी राम मारते है परन्तु वह स्वर्ण मृग के रूप में आता है -

जटायु रावण युद्ध -

गीधराज सुनि आरत बानी,
रघुकुलतिलक नारि पाहिचानी
सुनत गीध क्रोधातु धावा वह सुनरावन मोर सिखावा[93]

परन्तु रावण तो अपना विवेक भूल चुका था उसने गीधराज की एक नही सुनी उसने तो सीता हरण की ठान ही रखी थी । वह सीता को लेकर जाने लगता है जटायु उसे मूर्छित कर देते हैं पर वह होंश में आकर जटायु के पंख काट देता है । घायल जटायु पृथ्वी पर गिर जाता है व फिर राम के आने पर सारा वृतान्त बताता है।

बालि सुग्रीव युद्ध -

सुग्रीव और बालि दोनों भाई होते हुए भी शत्रुओं की तरह से थे । उनमे आपसी प्रेम के स्थान पर द्वेष था ।

रिपु सम मोहि मोरसि अति भारी, हरि लीन्होसि सर्बसु अरूनारी[94]

जब सुग्रीव ने राम को यह बताया कि उसने गलत समझ कर मेरी पत्नी व राज्य दोनों ही को ले लीया है तब राम ने उसे उससे युद्ध करने के लिए कहा -

मै जो कहा रघुवीर कृपाला बंधु न होइ मोर यह काला[95]

तब रघुपति सुग्रीव पठावा
सुनत बालि क्रोधातुर धावा[96]

दोनों के युद्ध के समय राम उसे तीर मारते हैं और यह स्पष्ट करते हैं कि -

अनुज वधू भगिनी सुत नारी, सुनु सठकन्या समएचारी[97]
इन्हहि कुदृष्टि बिलोकइ जोइ, ताहि बधे कछु पाप न होई[98]

लंका का युद्धारम्भ -

लंका से अंगद के आने के बाद युद्ध का आरम्भ होता है यह मुख्य युद्ध है । इसे निर्णायक युद्ध कहा जा सकता है । सारी सेना को चार दलों में बांटकर दुर्गों का घेराव करके युद्ध की भूमिका बनाई जाती है ।[99]

सेना के समुद्र पार आने पर लंका में कोलाहल मच जाता है, रावण अपना डर अहंकार के रूप में व्यक्त करता है । अनेकों अस्त्र शस्त्र लेकर सेनाएँ खड़ी रहती है ।

नाना युध सर चाप धर जातु धान बल बीर
कोट कँगूरन्हि चढि गए कोटि-कोटि रनधीर[100]

दोनों ओर से अस्त्र शस्त्रों का बारिश होती है कुछ घायल होते हैं, कुछ मरते हैं, कुछ भाग जाते हैं । एक के बाद एक योद्धा युद्ध करते हैं । लक्ष्मण को शक्ति लगती है, उसके बाद कुम्भकरण को उठाया जाता है । उसने भी रावण को समझाया परन्तु हार कर राम से युद्ध करने चला जाता है, और वीरगति प्राप्त करता है ।[101] मेघनाद रावण का पुत्र था वह महानवीर था वह युद्ध में विजय प्राप्त करने के लिए यज्ञ करता है ।

मेघनाद मख करइ अपावन
खल मायावी देव सतावन
जो प्रभु सिद्ध होइ सो पाइहि
नाथ बेगि पुनि जीति न जाइहि[102]

कहकर उसका यज्ञ विध्वंस करने का कहते हैं । क्योंकि उसके बाद उसको जीतना कठिन हो जाएगा । अधूरे यज्ञ में से उठने से उसका वध लक्ष्मण से युद्ध करते समय हो जाता है ।

इसके बाद रावण व राम का युद्ध होता है । रावण हर प्रकार

से माया का सहारा लेता है वानर सेना को डराना चाहता है परन्तु प्रभु सारी माया का देते हैं । राम के रथविहीन होने पर विभीषण चिन्ता करता है । और राम उसे सच्चे रथ का उपदेश देते हैं । रावण की माया काट करके उससे युद्ध करते हैं ।

माया बिगत कपि भालु हरषे बिटप गिरि गहि सब फिरे
सरनिकर छाड़े राम रावलन बाहु सिर पुनि महिगिरे
श्रीराम रावन समर चरित अनेक कल्प जोगावहि
सत सेष सारद निगम कबि तेउ तदपि पार न पावहि[103]

विभिषण से नाभि कुन्ड का रहस्य पूछ कर फिर राम हाथ में कराल बाण ले लेते हैं

नाभि कुन्ड पियूष बस पाकें, नाथ जिअत रावनु बलताके
खैचि सरासन श्रवन लगि छाड़े सर एकतीस
रघुनायक सायक चले मानहु काल फनीस[104]

इस प्रकार रावण का वध होता है और इस मानस के सभी युद्धों का अन्त आता है । ये युद्ध अनिवार्य थे उनको टाला नही जा सकता था क्योंकि ये संस्कारों की लड़ाई थी । भारतीय संस्कृति में असुरों के उत्पीड़न की लड़ाई थी ।

इस प्रकार मानस में विभिन्न युद्धों का परिचय दिया गया है।